गुरु गोमके पोन्डेत रघुनाथ मुर्मू

व्यक्तित्व व कृतित्व

मंगल चंद्र हांसदा

जन्म :

6 जनवरी 1970, झारखंड

शिक्षा :

वाणिज्य स्नातक

विशेष :

पत्रिका में आदिवासी मामले के प्रभारी

संपर्क :

9999897704

भारतवर्ष में रहने वाले आदिवासी में एक समुदाय 'संथाल' है। संथाल विशेषकर झारखंड, ओड़िसा, बिहार, पश्चिम बंगाल एवं आसाम राज्यों में बहुतायत में रहते हैं। ऐसे संथाल हमारे पड़ोसी देश बांग्लादेश और नेपाल में भी पाये जाते हैं।

संथाल समाज में अनेक महापुरुष पैदा हुए, जिन्होंने इस समाज की दशा को सुधारने के लिए नई दिशा दी। उसके लिए इन्होंने अपने जीवन समर्पित कर दिया। इन महापुरुषों में से गुरू गोमके 'पोन्डेत रघुनाथ मुर्मू' का नाम बड़े आदर एवं सम्मान के साथ लिया जाता है। इसका कारण यह है कि उन्होंने अपना सारा जीवन शिक्षा के द्वारा संथाल समाज को उन्नति की राह में अग्रसर किया।

गुरू गोमके पोन्डेत रघुनाथ मुर्मू का जन्म 5 मई 1905 को गांव डांडबुस, डाहारडीह टोला, रायरंगपुर, जिला मयूरभंज, ओड़िसा राज्य में पूर्णिमा के दिन पिता नंद लाल एवं माता सलमा मुर्मू के घर में हुआ था।

रघुनाथ मुर्मू को लोग केवल 'ओक-चिकि' लिपि के जनक या खोजकर्ता के रूप में ही ज्यादा जानते हैं, जबकि वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनके शोधपरक कार्यों और सर्जनात्मक लेखन ने समाज के अंदर

''रघुनाथ मुर्मू ने अपने दार्शनिक बोध एवं दूरदृष्टि से संथाल समाज में अशिक्षा के कारण फैली गरीबी एवं लाचारी को समझ लिया था। इसके लिये उन्होंने शिक्षा के द्वारा उसे दूर कर एक शिक्षित एवं उन्नत समाज की कल्पना की थी। रघुनाथ मुर्मू को ये बातें आरंभ से ही अच्छी तरह से समझ में आ गई थी कि समाज का संपूर्ण विकास के लिए अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करना एवं शिक्षित होना अनिवार्य है।''

युगान्तरकारी परिवर्तनों को घटित करने में महत्वपूर्ण और अविस्मरणीय योगदान दिया था। कवि, गीतकार, लेखक, उपन्यासकार, नाटककार, शिक्षक और शिक्षाविद के रूप में वे प्रसिद्ध थे। उनका लेखन इतना उम्दा था कि अक्सर उन्हें दार्शनिक के रूप में भी पहचाना जाने लगा।

रघुनाथ मुर्मू ने अपने दार्शनिक बोध एवं दूरदृष्टि से संथाल समाज में अशिक्षा के कारण फैली गरीबी एवं लाचारी को समझ लिया था। इसके लिये उन्होंने शिक्षा के द्वारा उसे दूर कर एक शिक्षित एवं उन्नत समाज की कल्पना की थी। रघुनाथ मुर्मू को ये बातें आरंभ से ही अच्छी तरह से समझ में आ गई थी कि समाज का संपूर्ण विकास के लिए अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करना एवं शिक्षित होना अनिवार्य है। इसके लिए वे कहते हैं, 'सेंड़ाय एम मेनेद् खान, पारसी माड़ां सेंड़ाय ताम। पारसी संड़ाम मेनेद् खान, रोड़ माड़ां सेंड़ाय ताम।।' (अगर आप कुछ सीखना चाहते हैं तो पहले मातृभाषा को सीखो। मातृभाषा सीखना चाहते हो तो सबसे पहले अपनी लिपि को सीखो।।) यही वजह थी कि उन्होंने अपना सारा जीवन ओक-चिकि लिपि की खोज करने और उनकी उन्नति के लिए लगा दिया। सन् 1925 ई. में कड़ी मशक्कत के बाद आखिर उन्होंने 'ओक-चिकि' लिपि को खोज निकाला। ओक-चिकि लिपि की यह विशेषता है कि इस लिपि की मदद से संथाली भाषा को शुद्ध रूप में

''रघुनाथ मुर्मू ने ओक-चिकि लिपि को खोज लेने के बाद इसका प्रचार प्रसार करने के लिए गांव-गांव और प्रांत-प्रांत भ्रमण किया। इसके लिए उन्होंने 'आदिवासी सोश्ओ-एजुकेशन-कल्चर एसोशिएशन(एसेका) नामक संस्था का 1 जून, 1964 को ओड़िसा के रायरंगपुर नामक स्थान में गठन किया, जो संथाली भाषा एवं ओक-चिकि लिपि के प्रचार-प्रसार के साथ शिक्षा प्रदान करता है।''

उच्चारण किया जा सकता है, साथ ही लिखा और पढ़ा जा सकता है। ओक-चिकि लिपि में यदि अन्य भाषाओं को लिखा जाए तो उनका भी सही उच्चारण किया जा सकता है, पढ़ा और लिखा भी जा सकता है। इस विशेषता के कारण ओक-चिकि लिपि को वैज्ञानिक लिपि के रूप में मान्यता देने में कोई अरचन नहीं आती है।

रघुनाथ मुर्मू ने ओक-चिकि लिपि को खोज लेने के बाद इसका प्रचार प्रसार करने के लिए गांव-गांव और प्रांत-प्रांत भ्रमण किया। इसके लिए उन्होंने 'आदिवासी सोश्ओ-एजुकेशन-कल्चर एसोशिएशन (एसेका) नामक संस्था का 1 जून, 1964 को ओड़िसा के रायरंगपुर नामक स्थान में गठन किया, जो संथाली भाषा एवं ओक-चिकि लिपि के प्रचार-प्रसार के साथ शिक्षा प्रदान करता है। वर्तमान में एसेका संस्था की विभिन्न स्थानों में शाखाएं विद्यमान हैं। संथाली भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई न हो, इसके लिए उन्होंने 150 से ज्यादा पुस्तकें लिखीं। उनके द्वारा लिखी गई प्रमुख पुस्तकें हैं ओल चेमेद, एलखा, हितल, बांखेंड़, रोनोड़, पारसी पोहा, होड़ सेरेंञ और लाकचार सेरेञ। उन्होंने कुछ लोकप्रिय नाटक भी लिखें' बिदु-चॉदान, दाड़े में थोन, सिदु-कान्हूं हुल और खेरवाल बीर। जिसे आरंम्भ में उन्होंने स्वयं ही मंचित भी किया।

उन्होंने 'ओल-चिकि' लिपि को छापने के लिए छापाखाना मशीन भी बनाया। छापाखाना को आज के झारखण्ड राज्य के 'जमशेदपुर' नामक शहर में बनाया, जो ओड़िशा के रायरंगपुर शहर से करीब था। उन्होंने उस प्रेस का नाम 'चॉदान प्रेस' रखा। उस प्रेस से गुरू गोमके द्वारा लिखी गई पुस्तकों को छापा गया। साथ ही मासिक पत्र-पत्रिकाओं का भी प्रकाशन किया गया।

'ओल-चिकि लिपि के आविष्कार ने संथाल समाज में शिक्षा के क्षेत्र क्रांति का संचार किया। लोगों में संथाली भाषा के प्रति अथाह प्रेम उमड़ पड़ा। साथ ही अपने लिपि में

पढ़ने-लिखने का ललक पैदा हुआ। सन् 1964 में 'एसेका' के स्थापना के बाद विभिन्न स्थानों में उनके द्वारा संचालित शाखाओं पर अपने मातृभाषा और अपनी लिपि से पढ़ने-लिखने के लिए लोग उमड़ पड़े। लोगों का यह ललक कब आकांशा में बदलकर संथाली भाषा के लिए आंदोलन का रूप ले लिया और यह आंदोलन '22 दिसम्बर 2003' को भारत के संविधान की अनुसूची में संथाली भाषा को अनुसूचित कर ही विराम हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार द्वारा संथाली भाषा को विकल्प या अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। इससे उन छात्रों ने संथाली विषय के स्नातक स्तर, ऑनर्स और स्नातोत्तर स्तर पर पीएचडी किया। वर्तमान में वे सब छात्र कॉलेजों में लेक्चर एवं प्रोफेसर बनकर नौकरी कर रहे हैं। जो रोजगार के साथ आजीविका का साधन बन गया। साथ ही वे सब छात्र वे सब छात्र विश्वविद्यालयों में संथाली विभाग के विभागाध्यक्ष पदों को सुशोभित कर रहे हैं। उसी तरह राज्य स्तरीय लोक सेवा आयोग जैसे झारखण्ड लोक सेवा आयोग, पश्चिम बंगाल लोक सेवा आयोग, ओड़िसा लोक सेवा आयोग आदि में संथाली भाषा को विकल्प/अनिवार्य विषय के रूप में चुनकर परीक्षार्थी अच्छो अंक से उत्तीर्ण कर रोजगार के अवसर प्राप्त कर सकते हैं। इसमें भी संथाली भाषा के विषय को राज्य की लिपि के साथ 'ओल-चिकि' में भी परीक्षा दे सकता हैं। राष्ट्रीय स्तर में भी संघ लोक सेवा आयोग जैसे संस्था भी संथाली विषय को देवनागरी या 'ओल-चिकि' में परीक्षा दिया जा सकता है। इससे परीक्षार्थी राष्ट्रीय स्तर पर प्रशासनिक सेवा में जाकर देश की सेवा करने का अवसर प्राप्त कर सकता है। राष्ट्रीय स्तर पर ही और एक संस्था है जिसे साहित्य अकादेमी कहते हैं। यह संस्था प्रत्येक वर्ष आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं के साहित्यकारों को सम्मानित करती है। इसमें भी संथाली भाषा के साहित्यकारों को भी सम्मानित करती है, जो 'ओल-चिकि' में साहित्य का सृजन करता है। यह संथाल समाज के लिए बड़ी उपलब्धि है।

गुरू गोमके ने 'ओल-चिकि' लिपि का आविष्कार संथालों को एक सूत्र में बांधने के लिए किया, क्योंकि संथाल भौगोलिक कारणों से अलग-अलग राज्यों में रहते हैं। इस कारण वहां की राज्य भाषा एवं लिपि में पढ़ने-लिखने के लिए मजबूर थे।

इस तरह गुरू गोमके ने अपने अथक प्रयास से लिपि और मातृभाषा द्वारा संथालों को एकजुट कर संथाल समाज को एक नई दिशा और प्रगति के पथ पर अग्रसर किया।

उन्होंने हमें समाज को किस तरह प्रगति के पथ पर ले जाना है, हमें अपने कार्यों द्वारा दिखाया। उनके द्वारा समाज के लिए बहुमूल्य योगदान को देखते हुए, गणमान्य व्यक्तियों एवं संस्थाओं ने उन्हें विभिन्न उपाधि और सम्मान से नवाजा-

1) आदिवासी महासभा रायरंगपूर, ओड़िसा।
2) माननीय जयपाल सिंह मुंडा-पोन्डेत
3) डॉ. मार्टिन उरांव 'स्प्रिरिचुअल गुरू'
4) मिस्टर सी मुखर्जी 'प्रिस्टि आफ द ट्राइबल'
5) मिस्टर रंजित सिंह बारिहा 'अ ग्रेट ऑराटोर विद चार्मिंग व्याइस
6) मिस्टर एम डी जोलियस तिग्गा-इंवेंटोर एंड ड्रामास्टि
7) डुमखुरिया रांची 'डी-लिट
8) उड़िया साहित्य अकादेमी 'फाउंडर आफ संथाली लेंवेजेज, लिटरेचर एंड इंवेंटर ऑफ ऑल-चिकि स्क्रिप्ट'

उनके द्वारा अतुलनीय कार्यों के लिए विशेषकर संथाल समाज हमेशा उनका ऋणी रहेगा। उन्होंने बेंदकुंदरी डाही, झारग्राम (पश्चिम मिदनापुर जिला), पश्चिम बंगाल राज्य में सिदु-कान्हूं विश्वविद्यालय बनाने का सपना देखा था, जो उनके जीवित रहते सच नहीं हो पाया। '1 फरवरी 1982' को गुरू गोमके हमें अनाथ छोड़कर इस दुनिया से हमेशा के लिए चल बसे। लेकिन उनका देखा हुआ सपना अधूरा रह गया। अगर हम सही अर्थो में उनके ऋणी हैं, तो उनके अधूरे सपने को पूरा करने का बीड़ा उठाना होगा और उसे मुर्त रूप देना होगा। तभी गुरू गोमके को हमारे तरफ से सच्ची श्रद्धाजलि होगी।